वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 352
ISBN 978-93-82071-74-7

मंगल प्रभात

-रचयित्री-

गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी

– प्रकाशक –

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com

प्रथम संस्करण	वी. नि. सं. 2539	मूल्य
2200 प्रतियाँ	श्रावण शुक्ला एकादशी	10/-रु.
	17 अगस्त 2013	

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

-: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :-
गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी
-: मार्गदर्शन :-
प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी
-: निर्देशक एवं सम्पादक :-
कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी
-: प्रबंध सम्पादक :-
जीवन प्रकाश जैन
सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग-ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

-कर्मयोगी पीठाधीश
स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

वर्तमान में सभी मनुष्यों का जीवन मंगलमयी हो, इसके लिए देवदर्शन, भगवान की भक्ति, स्तुति, जिनेन्द्रदेव का अभिषेक, पूजन आदि मंगल साधन हैं

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी, युगप्रवर्तिका, राष्ट्रगौरव, वाग्देवी, सिद्धान्तचक्रेश्वरी, चारित्रचन्द्रिका आदि अनेक उपाधियों से विभूषित आर्यिकाशिरोमणि १०५ गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने बड़े-बड़े विधानों एवं ग्रंथों की रचना करते हुए भी सभी जीवों के मंगल की कामना की भावना से इस लघुकाय पुस्तिका 'मंगल प्रभात' को तैयार किया है। इसमें सभी पाठ सभी मनुष्यों के जीवन के लिए बहुत ही उपयोगी हैं।

पूज्य माताजी इसी तरह से जन-जन का उपकार करती हुईं दीर्घ एवं स्वस्थ जीवन को प्राप्त करें, यही जिनेन्द्रदेव से मंगल प्रार्थना है और वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला सत्साहित्य का प्रकाशन कर दिन-दूनी रात चौगुनी वृद्धि करे, यही शुभेच्छा है।

दो शब्द

-आर्यिका चन्दनामती

"मंगल प्रभात" नाम की इस लघुकाय पुस्तिका में प्रातःकाल को एवं रात्रि में निद्रा को भी मंगलमयी बनाने के लिए पुण्यवर्धक पाठ दिये गये हैं।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने इसमें सर्वप्रथम प्रातःकाल पढ़ने के लिए णमोकार मंत्र, चत्तारि मंगल पाठ एवं "सुप्रभात स्तोत्र" (संस्कृत-हिन्दी) तथा "उषा वन्दना" नाम के तीन पाठ दिये हैं, जिन्हें पढ़कर घर के सभी लोगों को जगाने से मनप्रसन्न होता है और दिवस मंगलमय बन जाता है।

पुनः दिन में पढ़ने वाला भी पाठ इसमें है, जैसे- तीर्थंकर जन्मभूमि वंदना संस्कृत व हिन्दी में दो हैं। पुनः सायंकाल में श्रावक-श्राविकाएँ मंदिर में आरती, स्वाध्याय आदि के अनन्तर आलोचना पाठ या कल्याणालोचना पाठ पढ़ें, जिससे दिनभर के किये गये आरंभ, व्यापार आदि के दोषों का क्षालन होगा। पुनश्च सोते समय जिनवंदना जिसमें

तीर्थंकर माता के सोलह स्वप्न हैं। इस वंदना को पढ़कर और वज्रपंजर स्तोत्र को पढ़कर सोने से अशुभ स्वप्न नहीं आयेंगे। सुखद निद्रा आयेगी व शुभ स्वप्न होंगे तथा मंगलमय प्रभात होगा। इसमें चौबीस तीर्थंकर सुप्रभात स्तोत्र संस्कृत अज्ञातकवि कृत है। आलोचना पाठ सर्वजन प्रसिद्ध है। हिन्दी तीर्थंकर जन्मभूमि वंदना मेरे द्वारा रचित है। शेष सभी रचनाएँ पूज्य गणिनी माताजी द्वारा रचित हैं। यह 'मंगल प्रभात' सबके लिए मंगलमयी होवे, यही मेरी मंगलकामना है।

विषय-सूची

क्र.स.	विषय	पृष्ठ नं.
१.	अनादिनिधन महामंत्र	७
२.	चत्तारिमंगल पाठ	८
३.	सुप्रभातष्टक-स्तोत्र	९
४.	उषा वंदना	१३
५.	चौबीस तीर्थंकर सुप्रभात स्तोत्र	१८
६.	थोस्सामि स्तव	१९
७.	तीर्थंकर जन्मभूमि वंदना (संस्कृत)	२०
८.	जिनवाणी स्तुति	२३
९.	गुरु वंदना	२४
१०.	तीर्थंकर जन्मभूमि वंदना (हिन्दी)	२५
११.	आलोचना पाठ	२८
१२.	कल्याणालोचना	३३
१३.	त्रैलोक्य वंदना	४०
१४.	श्री तीर्थंकर स्तवन	४५
१५.	अथ वज्रपंजरस्तोत्रम्	४८

मंगल प्रभात

अनादिनिधन महामंत्र

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं।।
एसो पंचणमोयारो, सव्वपावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।।
अर्हंतो मंगलं कुर्युः, सिद्धाः कुर्युश्च मंगलम्।
आचार्याः पाठकाश्चापि, साधवो मम मंगलम्।।
ॐ नमो मंगलं कुर्यात्, ह्रीं नमश्चापि मंगलम्।
मोक्षबीजं महामंत्रं, अर्हं नमः सुमंगलम्।।

चत्तारि मंगलं — अरिहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहु मंगलं, केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं।

चत्तारि लोगुत्तमा — अरिहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि — अरिहंत सरणं पव्वज्जामि, सिद्ध सरणं पव्वज्जामि, साहु सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि।

मैंने पं. सुमेरचंद्र दिवाकर, पं. पन्नालाल साहित्याचार्य, प्रो. मोतीलाल कोठारी, फलटन आदि अनेक विद्वानों से चर्चा की थी। ये विद्वान भी प्राचीन पाठ के समर्थक थे। एक बार पं. पन्नालाल जी सोनी ब्यावर वालों ने कहा था कि जितने भी प्राचीन यंत्र हैं व प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथ हैं सभी में बिना विभक्ति का प्राचीन पाठ ही मिला है अतः ये ही प्रमाणीक हैं। यह विभक्ति सहित अर्वाचीन पाठ श्वेताम्बर परम्परा से आया है ऐसा पं. पन्नालाल जी साहित्याचार्य ने कहा था। जो भी हो, हमें और आपको प्राचीन पाठ ही पढ़ना चाहिए। सभी पुस्तकों में प्राचीन पाठ ही छपाना चाहिए व मानना चाहिए। नया परिवर्द्धित पाठ नहीं पढ़ना चाहिए।

सुप्रभातास्टक-स्तोत्रं

देवेन्द्रवंद्यचरणांबुरुहं जिनेन्द्रं।
उत्तिष्ठ भव्य! भज तं सहसा प्रभाते।।
भंक्त्वा प्रमादमचिरं त्यज मोहनिद्रां।
उत्तिष्ठ भव्य! भुवि विस्फुरितं प्रभातम्।।१।।

सुरपति वंदित चरणसरोरुह कर्म शत्रुजित् जिनवर को।
उठो भव्य! प्रातः मंगलमय बेला में तुम उन्हें भजो।।
मोहनींद को दूर भगावो उठो! उठो! झट तजो प्रमाद।
उठो भव्य! अब प्रकाश फैला मंगलमय हो सदा प्रभात।।

आगत्य चैत्यसदने जिनवक्त्रपद्मं।
संवीक्ष्य भक्तिभरतः गतरागरोगं।।
प्रेम्णा नतिं कुरु जिनेश्वरपादपद्मे।
उत्तिष्ठ भव्य! भुवि विस्फुरितं प्रभातम्।।२।।

श्री जिनचैत्यालय में आकर भक्तिभाव से जिनवर की।
वीतराग के आस्य कमल का दर्शन करो स्थिर चित ही।।
मुद से प्रभु के चरण कमल में नमस्कार तुम करो सतत।
उठो भव्य! अब प्रकाश फैला मंगलमय हो सदा प्रभात।।

अर्हत्सुसिद्धगुरुसुरिसुपाठकांश्च ।
साधून् मुदा प्रणम सर्व मुमुक्षुवर्गान्।।
जैनेन्द्रबिम्बमवलोक्य विमुञ्च रागं।
उत्तिष्ठ भव्य! भुवि विस्फुरितं प्रभातं।।३।।

अर्हत्सिद्धाचार्य उपाध्याय-साधु पंचपरमेष्ठी को।
मुक्ति वधू प्रिय, मुमुक्षु मुनिगण रुचि से वंदो इन सबको।।
श्री जिन वीतराग प्रतिमा का दर्शन कर झट तजो कुराग।
उठो भव्य! अब प्रकाश फैला मंगलमय हो सदा प्रभात।।

घात्यंतकांतशुचिकेवल-बोधभास्वान्।
सज्ज्ञानदीधितिविनष्टतमः समूहः।।
तं श्री जिनं किल भज त्यज मोहनिद्रां।
उत्तिष्ठ भव्य! भुवि विस्फुरितं प्रभातं।।४।।

घातिकर्म संहारक निर्मल केवलज्ञान विभाकर हैं।
ज्ञानज्योति मय खर किरणों से तमसमूह के ध्वंसक हैं।।
उन जिनवर का आश्रय लेवो करो मोह निद्रा का त्याग।
उठो भव्य! अब प्रकाश फैला मंगलमय हो सदा प्रभात।।

तारागणा अपि विलोक्य विधोः सपक्षं।
खे निष्प्रभं विमतयोऽपि च यांति नाशं।।
स्याद्वादभास्वदुदये त्यज मोहनिद्रां।
उत्तिष्ठ भव्य! भुवि विस्फुरितं प्रभातं।।५।।

तारागण भी निजस्वामी शशि के विद्रोही रवि को लख।
निष्प्रभ हुए गगन में तद्वत् कुवादि गण भी हुए प्रहत।।
ममतामय निद्रा को छोड़ो स्याद्वाद रवि हुआ उदित।
उठो भव्य! अब प्रकाश फैला मंगलमय हो सदा प्रभात।।

त्रैलोक्यभास्कर! महाकुमतांधकारं।
निर्दोषवाङ्मयकरैश्च निहन्सि वेगात्।।
एकांतवादिमनुजाः झटिति प्रणष्टाः।
उत्तिष्ठ भव्य! भुवि विस्फुरितं प्रभातं।।६।।

त्रिभुवन भास्कर! महा कुमतिमय अंधकार छाया जग में।
दिव्यध्वनि मय खर किरणों से उसे भगाया प्रभु तुमने।।
मिथ्यैकांत वादि गण झटिति तुमको लख हो गये विनाश।
उठो भव्य! अब प्रकाश फैला मंगलमय हो सदा प्रभात।।

अस्मिन्ननादिभव संकटजन्मसिन्धौ।
मज्जंत्यनंतभविनः किल दृष्टिमोहात्।।

पश्यंति मार्गमचिरात् त्वदपूर्वसूर्यात्।
उत्तिष्ठ भव्य! भुवि विस्फुरितं प्रभातं।।७।।

इस अनादि भव संकटमय संसार जलधि में हे स्वामिन्।
डूब रहे हैं अनंत प्राणी दर्शन मोह उदय से नित।।
प्रभु तुम अद्वितीय भास्कर हो तुमसे झट देखें मारग।
उठो भव्य! अब प्रकाश फैला मंगलमय हो सदा प्रभात।।

श्रीमज्जिनेन्द्र! हर मे त्वरमार्तरौद्रं।
'ज्ञाने मतिं' वितनु शांतिमपास्तदुःखां।।
संघाय, मे च जगते, कुरु मंगलं च।
उत्तिष्ठ भव्य! भुवि विस्फुरितं प्रभातं।।८।।

श्रीमन्! भगवन् शीघ्र हमारे आर्तरौद्र दुर्ध्यान हरो।
तत्त्व 'ज्ञानमती' करो सदा दुःख रहित शांति को पूर्ण करो।।
संघ के, जग के लिये, हमारे लिये, करो मंगल संतत।
उठो भव्य! अब प्रकाश फैला मंगलमय हो सदा प्रभात।।

जिनस्य भवने घंटा-नादेन प्रतिवादिनः।
तमोनिभाः प्रणष्टा हि ते जिनाः संतु नः श्रियै।।९।।

अर्हत्प्रभु के चैत्यसदन में घंटाध्वनि हो रही महान।
मिथ्यादृष्टिजन उसको सुन नष्ट हो रहे तिमिर समान।।
देवदेव का सुखद सुमंगल प्रभात शुभ मंगलमय हो।
वे जिनदेव अमंगलहारी हमें मुक्ति लक्ष्मी प्रद हों।।

उषा-वंदना

उठो भव्य! खिल रही है उषा, तीर्थ वंदना स्तवन करो।
आर्त रौद्र दुर्ध्यान छोड़कर, श्री जिनवर का ध्यान करो।।
उठो भव्य.।।

अष्टापद से वृषभदेव जिन, वासुपूज्य चंपापुरि से।
ऊर्जयन्त से श्री नेमीश्वर, मुक्ति गये वंदों रुचि से।।
उठो भव्य.।।१।।

पावापुरी सरोवर से इस, उषाकाल में श्री महावीर।
विधुतक्लेश निर्वाण गये हैं, नमो उन्हें झट हो भवतीर।।
उठो भव्य.।।२।।

बीस जिनेश्वर मोक्ष गये हैं, श्री सम्मेद शिखर गिरि पर।
और असंख्य साधुगण भी, शिवपायी वहीं नमों सुखकर।।
उठो भव्य.।।३।।

ऊर्जयंत से नेमिप्रभु प्रद्युम्न, शंभु अनिरुद्धादिक।
कोटि-बहत्तर सातशतक मुनि, सिद्ध हुए हैं वंदों नित।।
उठो भव्य.।।४।।

साढ़े तीन कोटि वरदत्तवरांग सागरदत्तादिक।
मुनि तारवर नगर से गये, मोक्ष उन्हें वंदों नितप्रति।।
उठो भव्य.।।५।।

रामचंद्र के दो सुत लाड, नृपादिक पंच करोड़ गिनो।
पावागिरी शिखर से शिवपुर, गये भक्ति से उन्हें नमो।।
उठो भव्य.।।६।।

पांडव तीन द्रविड़ राजादिक, आठ कोटि मुनि सुरपूजित।
शत्रुंजय गिरि से शिव पाये, नमो सभी को भाव सहित।।
उठो भव्य.।।७।।

बलभद्र सप्त यादव नरेन्द्र, इत्यादिक आठ कोटि परिमित।
गजपंथा गिरि से शिव पहुँचे, भाव भक्ति से वंदो नित।।
उठो भव्य.।।८।।

राम हनूमन सुग्रीव गवगवाख्य, नील महानील यति।
निन्यानवे कोटि मुनि तुंगी-गिरि से शिव गये करो नति।।
उठो भव्य.।।९।।

नंग अनंग कुमर अरु साढ़े-पाँच कोटि परिमित मुनिगण।
सोनागिरिवर से निर्वाण गये उन सबको करो नमन।।
उठो भव्य.।।१०।।

साढ़े पंच कोटि मुनि दशमुख, सुत आदिक रेवातट से।
मृत्युजीत शिवकांता पाई, नमो सभी को प्रीति से।।
उठो भव्य.।।११।।

रेवा नदितट पश्चिम दिश में, कूट सिद्धवर से निर्वाण।
दो चक्री दश मदन सार्धत्रय, कोटि साधु को करो प्रणाम।।
उठो भव्य.।।१२।।

बड़वानी पत्तन से दक्षिण-दिशि में चूलगिरी ऊपर।
इंद्रजीत अरु कुंभकर्ण, शिवपाई उन्हें नमो भवहर।।
उठो भव्य.।।१३।।

पावागिरी शिखर के ऊपर, सुवर्णभद्रादि मुनि चार।
नदी चेलना तट सन्निध, निर्वाण गये वंदों सुखकार।।
उठो भव्य.।।१४।।

फलहोड़ीवर ग्राम के पश्चिम दिश में द्रोणागिरि परसे।
गुरुदत्तादि मुनींद्र परम निर्वाण गये वंदो रुचि से।।
उठो भव्य.।।१५।।

नागकुमार बालि महाबलि-आदिक मुनि अष्टापद से।
कर्मनाश शिवनारि वरी, उनको बंदो नित भक्ति से।।
उठो भव्य.।।१६।।

अचलापुर ईसान दिशा में, मेढ़ागिरी शिखर ऊपर।
साढ़े तीनकोटि मुनि शिवपुर, पहुँचे वंदों भवभयहर।।
उठो भव्य.।।१७।।

वंशस्थल वन के पश्चिम दिश, कुंथलगिरि में भी मुनिराज।
कुलभूषण अरु देशभूषण, शिव गये नमो उनके पादाब्ज।।
उठो भव्य.।।१८।।

जसरथ नृपसुत अरु कलिंग देश में यतिवर पंचशतक।
कोटि शिला पर कोटि मुनीश्वर, मुक्ति गये हैं नमो सतत।।
उठो भव्य.।।१९।।

पार्श्व जिनेश्वर समवसरण में, वरदत्तादि पंच ऋषिराज।
मुक्ति हुए रेसिंदी गिरि से, उन्हें नमो भव जलधि जहाज।।
उठो भव्य.।।२०।।

जंबू वन से मुक्त हुए, अंतिम जंबूस्वामी उनको।
और अन्य मुनि जहाँ-जहाँ से, मुक्त हुए वंदों सबको।।
उठो भव्य.।।२१।।

जिनवर गणधर मुनिगण की, निर्वाण भूमियाँ सदा नमो।
पंचकल्याणक भूमि तथा, अतिशययुत क्षेत्र सभी प्रणमों।।
उठो भव्य.।।२२।।

शालिपिष्ट भी शर्करयुत, माधुर्य-स्वादकारी जैसे।
पुण्यपुरुष के पदरज से ही, धरा पवित्र हुई वैसे।।
उठो भव्य.।।२३।।

त्रिभुवन के मस्तक पर सिद्ध शिलापर सिद्ध अनंतानंत।
नमो नमो त्रिभुवन के सभी तीर्थ को जिससे हो भवअंत।।
उठो भव्य.।।२४।।

सिद्धक्षेत्र वंदन से नंतानंत जन्म कृत पाप हरो।
''सम्यग्ज्ञानमती' श्रद्धा से, शीघ्र सिद्ध सुख प्राप्त करो।।
उठो भव्य.।।२५।।

चौबीस तीर्थंकर सुप्रभात स्तोत्र

श्री नाभिनन्दन! जिनाजित! संभवेश!,
देवाभिनंदनमुने! सुमते जिनेन्द्र!।
पद्मप्रभ! प्रणुतदेव सुपार्श्वनाथ!,
चन्द्रप्रभास्तु सततं मम सुप्रभातम्।।१।।

श्री पुष्पदंत! परमेश्वर शीतलेश!,
श्रेयान् जिनो विगतमान! सुवासुपूज्य!।
निर्दोषवाग्विमल! विश्वजनीनवृत्तिः,
श्रीमन्ननन्त! भवतान्मम सुप्रभातम्।।२।।

श्रीधर्मनाथ! गणभृन्नतशांतिनाथ!,
कुन्थो महेश परमार विभार मल्लिः।
सत्यव्रतेश! मुनिसुव्रत! सन्नमीश!
नेमिः पवित्र! सततं मम सुप्रभातम्।।३।।

श्रीपार्श्वनाथ! परमार्थ विदां वरेण्य!,
श्रीवर्धमान! हतमान! विमानबोध!।
युष्मत्पदद्वयमिदं स्मरतो ममास्तु,
कैवल्यमस्तु विशदं मम सुप्रभातम्।।४।।

थोस्सामि स्तवन

स्तवन करूँ जिनवर तीर्थंकर, केवलि अनंत जिन प्रभु का।
मनुज लोक से पूज्य कर्मरज, मल से रहित महात्मन् का।।१।।
लोकोद्योतक धर्म तीर्थंकर, श्रीजिन का मैं नमन करूँ।
जिन चउबीस अर्हंत तथा, केवलि-गण का गुणगान करूँ।।२।।
ऋषभ, अजित, संभव, अभिनन्दन, सुमतिनाथ का कर वंदन।
पद्मप्रभ जिन श्री सुपार्श्व प्रभु, चन्द्रप्रभ का करूँ नमन।।३।।
सुविधि नामधर पुष्पदंत, शीतल श्रेयांस जिन सदा नमूँ।
वासुपूज्य जिन विमल अनंत, धर्मप्रभु शान्तिनाथ प्रणमूँ।।४।।
जिनवर कुन्थु अरह मल्लिप्रभु, मुनिसुव्रत नमि को ध्याऊँ।
अरिष्टनेमि प्रभु श्री पारस, वर्धमान पद शिर नाऊँ।।५।।
इस विध संस्तुत विधुत रजोमल, जरा मरण से रहित जिनेश।
चौबीसों तीर्थंकर जिनवर, मुझ पर हों प्रसन्न परमेश।।६।।
कीर्तित वंदित महित हुए ये, लोकोत्तम जिन सिद्ध महान्।
मुझको दें आरोग्यज्ञान अरु, बोधि समाधि सदा गुणखान।।७।।
चन्द्र किरण से भी निर्मलतर, रवि से अधिक प्रभाभास्वर।
सागर सम गंभीर सिद्धगण, मुझको सिद्धी दें सुखकर।।८।।

तीर्थंकर जन्मभूमि वंदना

(मंगलचतुर्विंशतिका)

-अनुष्टुप् छंद-

अयोध्या मंगलं कुर्या-दनन्ततीर्थकर्तृणाम्।
शाश्वती जन्मभूमिर्या, प्रसिद्धा साधुभिर्नुता।।१।।

ऋषभोऽजिततीर्थेशोऽप्यभिनंदनतीर्थकृत्।
श्रीमान् सुमतिनाथश्चा - नन्तनाथजिनेश्वरः।।२।।

पंचतीर्थकृतां गर्भ - जन्मकल्याणकादिषु।
इन्द्रादिभिः सदा वंद्या, वंद्यते वंदयिष्यते।।३।।

संप्रति कालदोषेण शेषास्तीर्थंकराः पृथक्।
संजातास्ता अपि जन्म-भूमयो मंगलं भुवि।।४।।

श्रावस्ती मंगलं कुर्यात्, संभवनाथजन्मभूः।
तनुतान्मे मनःशुद्धिं, भव्यानां भवहारिणी।।५।।

कौशाम्बी मंगलं कुर्यात्, पद्मप्रभस्य जन्मभूः।
जिनसूर्यो मनोऽब्जं मे, प्रफुल्लीकुरुतादपि।।६।।

वाराणसी जगन्मान्या, मंगलं तनुतान्मम।
जन्मभूमिः सुरैः पूज्या, सुपार्श्वपार्श्वनाथयोः।।७।।

चन्द्रपुरी सुरैर्मान्या, मंगलं कुरुतात्सदा।
चन्द्रप्रभजिनेंद्रस्य, जन्मभूर्जन्मपावनी।।८।।

काकंदी मंगलं कुर्यात्, पुष्पदन्तस्य जन्मभूः।
आनंदं तनुताद् भूमौ, सर्वमंगलकारिणी।।९।।

मंगलं कुरुतान्नित्यं, जन्मभूर्भद्रकावती।
शीतलस्य जिनेंद्रस्य, मनो मे शीतलं क्रियात्।।१०।।

सिंहपुरी जगन्मान्या, मंगलं कुरुतान्मम।
श्रीश्रेयांसजिनेंद्रस्य, जन्मभूमिः शिवंकरा।।११।।

चंपापुरी जगद्वंद्या, मंगलं तनुताद् ध्रुवं।
वासुपूज्यजिनेंद्रस्य, जन्मभूमिर्नुतामरैः।।१२।।

सा कंपिलापुरी नित्यं, मंगलं कुरुतान्मम।
मच्चित्तं विमलीकुर्यात्, विमलेश्वरजन्मभूः।।१३।।

रत्नपुरी यतीन्द्राणां, मंगलं कुरुताच्च नः।
सद्धर्मवृद्धये भूयाद्, धर्मनाथस्य जन्मभूः।।१४।।

हस्तिनागपुरी नित्यं, मंगलं तनुतान्मम।
शांतिकुंथ्वरतीर्थेशां, जन्मभूमिर्जगन्नुता।।१५।।

या मिथिलापुरी शश्वत्, मंगलं कुरुतान्मम।
जन्मभूमिः प्रसिद्धाभूत्, मल्लिनाथनमीशयोः।।१६।।

मंगलं संततं कुर्यात्, राजगृही सुजन्मभूः।
मुनिसुव्रतनाथस्य, दद्यान्मे सुव्रतं त्वसौ।।१७।।

शौरीपुर्यर्द्धचक्र्याद्यैः, मान्या मे मंगलं क्रियात्।
इन्द्रादिभिः सदा वंद्या, नेमिनाथस्य जन्मभूः।।१८।।

या कुण्डलपुरी पूज्या, मंगलं कुरुताद् भुवि।
जन्मभूमिः प्रसिद्धास्ति, महावीरस्य संप्रति।।१९।।

राजधानीह सिद्धार्थ-भूपतेः साधुभिर्नुता।
नंद्यावर्तं च प्रासादं, रत्नवृष्ट्या सुमंगलम्।।२०।।

चतुर्विंशतितीर्थेशां, षोडश जन्मभूमयः।
वंद्यास्ता मंगलं कुर्युः, घ्नन्तु जन्मपरम्परां।।२१।।

दीक्षाज्ञानस्थलं पूज्यं, प्रयागश्चाहिच्छत्रकं।
संततं मंगलं कुर्यात्, पूर्णज्ञानर्द्धये भवेत् ।।२२।।

कैलाशचंपापावोर्ज-यन्तसम्मेदशृंगिषु।
निर्वाणभूमयो यास्ताः, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।२३।।

पंचकल्याणकैः पूज्या, भूमिसरोवराद्रयः।
तास्तान् ज्ञानमती याचे, दद्युः सिद्धिं च मे ध्रुवम्।।२४।।

जिनवाणी स्तुति

हे सरस्वती माता, अज्ञान दूर कर दो।
जग को देकर साता, विज्ञान पूर भर दो।। टेक.।।
श्रुत का भण्डार भरा, तेरे ज्ञान की गंगा में।
जन मन शृंगार करा, गुरुवर मुनि चन्दा ने।।
शृंगार सहित माता, श्रुतज्ञान पूर्ण कर दो।
जग को देकर साता, विज्ञान पूर भर दो।।१।।
प्रभु वीर की वाणी सुन, गणधर ने संवारा है।
मुनिगण उस पथ पर चल, निज ज्ञान सुधारा है।।
निज ज्ञान किरणदाता, आलोक ज्ञान भर दो।
जग को देकर साता, विज्ञान पूर भर दो।।२।।
चंदन चंदा गंगा, तन शीतल कर सकते।
मुक्ता मालाएँ भी, नहिं मन को हर सकते।।
'चंदनामती' सबको, शारद माँ का वर दो।
जग को देकर साता, विज्ञान पूर भर दो।।३।।

गुरुवन्दना

(श्रावक-श्राविकाओं के लिए)

गुरुभक्त्या वयं सार्ध-द्वीपद्वितयवर्तिनः ।
वन्दामहे त्रिसंख्योन-नवकोटि मुनीश्वरान् ।।

णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

आचार्य, उपाध्याय और साधुओं की वंदना करते समय 'गुरुवंदना' पढ़कर नमोऽस्तु करें।

आर्यिकाओं को वंदामि तथा ऐलक, क्षुल्लक व क्षुल्लिका को इच्छामि कहकर नमस्कार करें।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवाय सर्वसिद्धिकराय सर्वसौख्यं कुरु कुरु ह्रीं नमः।

तीर्थंकर जन्मभूमि तीर्थ वंदना

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

—शेर छन्द—

जय जय जिनेन्द्र जन्मभूमियाँ प्रधान हैं।
जय जय जिनेन्द्र धर्म की महिमा महान है।।
जय जय सुरेन्द्रवंद्य ये धरा पवित्र हैं।
जय जय नरेन्द्र वंद्य ये तीरथ प्रसिद्ध हैं।।१।।

मिश्री से जैसे अन्न में मिठास आती है।
वैसे ही पवित्रात्मा तीरथ बनाती हैं।।
हो गर्भ जन्म दीक्षा व ज्ञान जहाँ पर।
वे तीर्थ कहे जाते हैं आज धरा पर।।२।।

जिनवर जनम से पहले वहाँ इन्द्र आते हैं।
नगरी को सुसज्जित कर उत्सव मनाते हैं।।
सुंदर महल सजाया जाता है वहाँ पर।
जिनवर के पिता-माता रहते हैं वहाँ पर।।३।।

पहली जनमभूमि है नगरि तीर्थ अयोध्या।
शाश्वत जनमभूमी प्रभू की कीर्ति अयोध्या।।

इस युग में किन्तु पाँच जिनेश्वर वहाँ जन्मे।
वृषभाजित अभीनंदन सुमति अनंत वे।।४।।

श्रावस्ती ने संभव जिनेन्द्र को जनम दिया।
कौशाम्बी में श्रीपद्मप्रभू ने जनम लिया।।
वाराणसी सुपार्श्व पार्श्व से पवित्र है।
श्रीचन्द्रपुरी चन्द्रप्रभू से प्रसिद्ध है।।५।।

काकन्दी को सौभाग्य मिला पुष्पदंत का।
भद्दिलपुरी जन्मस्थल शीतल जिनेन्द्र का।।
श्रेयाँसनाथ से पवित्र सारनाथ है।
जिनशास्त्रों में जो सिंहपुरी से विख्यात है।।६।।

श्रीवासुपूज्य जन्मभूमि चम्पापुरी है।
कम्पिल जी विमलनाथ जिनकी जन्मभूमि है।।
तीरथ रतनपुरी है धर्मनाथ की भूमी।
रौनाही से प्रसिद्ध है वह आज भी भूमी।।७।।

श्रीशांति कुंथु अरहनाथ हस्तिनापुर में।
जन्मे जिनेन्द्र तीनों त्रयलोक भी हरषे।।
मिथिलापुरी में मल्लि व नमिनाथ जी जन्मे।
तीर्थेश मुनिसुव्रत जी राजगृही में।।८।।

है जन्मभूमि शौरीपुर नेमिनाथ की।
महावीर से कुण्डलपुरी नगरी सनाथ थी।।
चौबीस जिनवरों की जन्मभूमि को नमूँ।
कर बार-बार वंदना सार्थक जनम करूँ।।९।।

श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा मिली।
कई जन्मभूमियों में नई ज्योति तब जली।।
उन प्रेरणा से जन्मभूमि वन्दना रची।
प्रभु जन्मभूमि तीर्थों की भक्ति मन बसी।।१०।।

प्रभु बार-बार मैं जगत में जन्म ना धरूँ।
इक बार जन्मधार बस जीवन सफल करूँ।।
इस भाव से ही जन्मभूमि वन्दना करूँ।
निज भाव तीर्थ प्राप्ति की अभ्यर्थना करूँ।।११।।

यह भक्तिसुमन थाल है गुणमाल का प्रभु जी।
अर्पण करूँ है भावना यात्रा करूँ सभी।।
बस "चन्दनामती" की इक आश है यही।
संयम की ही परिपूर्णता जीवन की हो निधी।।१२।।

आलोचना पाठ

-दोहा-

वंदों पाँचों परम-गुरू, चौबीसों जिनराज।
करूँ शुद्ध आलोचना, शुद्धि-करन के काज।।१।।

-सखी छंद-

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी।
तिनकी अब निर्वृति काजा, तुम सरन लही जिनराजा।।२।।

इस बे ते चउ इंद्री वा, मनरहित सहित जे जीवा।
तिनकी नहिं करुणा धारी, निरदइ ह्वै घात विचारी।।३।।

समरंभ समारंभ आरंभ, मन वच तन कीने प्रारंभ।
कृत कारित मोदन करिकैं, क्रोधादि चतुष्टय धरिकैं।।४।।

शत आठ जु इमि भेदनतैं, अघ कीने परिछेदन तैं।
तिनकी कहुँ कोलों कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी।।५।।

विपरीत एकांत विनयके, संशय अज्ञान कुनय के।
वश होय घोर अघ कीने, वचतैं नहिं जाय कहीने।।६।।

कुगुरुनकी सेवा कीनी, केवल अदया करि भीनी।
या विधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुँगति मधि दोष उपायो।।७।।

हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, पन वनिता सों दृग जोरी।
आरंभ परिग्रह भीनो, पन पाप जु या विधि कीनो।।८।।

सपरस रसना घ्रानन को, दृग कान विषय सेवनको।
बहु करम किये मनमाने, कछु न्याय अन्याय न जाने।।९।।

फल पंच उदंबर खाये, मधु मांस मद्य चित चाये।
नहिं अष्ट मूलगुण धारे, सेये कुविसन दुखकारे।।१०।।

दुइबीस अभख जिन गाये, सो भी निश-दिन भुंजाये।
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यों करि उदर भरायो।।११।।

अनंतानुबंधी सो जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो।
संज्वलन चौकड़ी गुनिये, सब भेद जु षोडश गुनिये।।१२।।

परिहास अरति रति शोक, भयग्लानि त्रिवेद संयोग।
पनबीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम।।१३।।

निद्रावश शयन कराई, सुपने मधि दोष लगाई।
फिर जागि विषय वन धायो, नाना विध विष-फल खायो।।१४।।

आहार विहार निहारा, इनमें नहिं जतन विचारा।
बिन देखी धरी उठाई, बिन शोधी वस्तु जु खाई।।१५।।

तब ही परमाद सतायो, बहुविधि विकलप उपजायो।
कछु सुधि बुधि नाहिं रही है, मिथ्यामति छाय गई है।।१६।।

मरजादा तुम ढिग लीनी, ताहू में दोष जु कीनी।
भिन भिन अब कैसे कहिये, तुम ज्ञान विषैं सब पइये।।१७।।

हा हा! मैं दुठ अपराधी, त्रस-जीवन-राशि विराधी।
थावर की जतन न कीनी, उर में करुणा नहिं लीनी।।१८।।

पृथिवी बहु खोद कराई, महलादिक जागाँ चिनाई।
पुनि बिन गाल्यो जल ढोल्यो, पंखातैं पवन बिलोल्यो।।१९।।

हा हा! मैं अदयाचारी, बहु हरितकाय जु विरादी।
तामधि जीवन के खंदा, हम खाये धरि आनंदा।।२०।।

हा हा! परमाद बसाई, बिन देखे अगनि जलाई।
तामध्य जीव जे आये, ते हू परलोक सिधाये।।२१।।

बीध्यो अन राति पिसायो, ईंधन बिन सोधि जलायो।
झाड़ू ले जागाँ बुहारी, चींटी आदिक जीव बिदारी।।२२।।

जल छानि जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारि जु दीनी।
नहिं जल-थानक पहुँचाई, किरिया बिन पाप उपाई।।२३।।

जल मल मोरिन गिरवायो, कृमि-कुल बहु घात करायो।
नदियन बिच चीर धुवाये, कोसन के जीव मराये।।२४।।

अन्नादिक शोध कराई, तातें जु जीव निसराई।
तिनका नहिं जतन कराया, गलियारे धूप डराया।।२५।।

पुनि द्रव्य कमावन काजै, बहु आरंभ हिंसा साजै।
किये तिसनावश अघ भारी, करुणा नहिं रंच विचारी।।२६।।

इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्री भगवंता।
संतति चिरकाल उपाई, वाणी तैं कहिय न जाई।।२७।।

ताको जु उदय अब आयो, नाना विध मोहि सतायो।
फल भुंजत जिय दुख पावै, वचतैं कैसे करि गावै।।२८।।

तुम जानत केवलज्ञानी, दुख दूर करो शिवथानी।
हम तो तुम शरण लही है, जिन तारन विरद सही है।।२९।।

इक गाँवपती जो होवे, सो भी दुखिया दुख खोवै।
तुम तीन भुवन के स्वामी, दुख मेटहु अतंरजामी।।३०।।

द्रौपदि को चीर बढ़ायो, सीता-प्रति कमल रचायो।
अंजनसे किये अकामी, दुख मेटो अतंरजामी।।३१।।

मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपनो विरद सम्हारो।
सब दोष रहित करि स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी।।३२।।

इंद्रादिक पद नहिं चाहूँ, विषयनि में नाहिं लुभाऊँ।।
रागादिक दोष हरीजे, परमातम निज पद दीजे।।३३।।

-दोहा-

दोष-रहित जिनदेवजी, निज-पद दीज्यो मोय।
सब जीवन के सुख बढ़ैं, आनंद मंगल होय।।

अनुभव माणिक पारखी, जौहरि आप जिनंद।
ये ही वर मोहि दीजिये, चरण शरण आनंद।।

१. ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिकराय श्रीशांतिनाथाय नमः।
२. ॐ ह्रीं श्रीं वद वद वाग्वादिनि भगवति सरस्वति ह्रीं नमः।

कल्याणालोचना

(हिन्दी पद्यानुवाद)

परमात्मा को वृद्धिंगत ज्ञान-सहित परमेष्ठी को प्रणमूं।
निजपर की सिद्धी हेतू मैं यह कल्याणालोचना भणूं।।१।।

रे जीव! अनंतभवों में तू भव भव में बहु संसरण किया।
मिथ्यात्व प्रकृति के उदयनिमित नहिं बोधि लाभ को प्राप्त किया।।२।।

संसार भ्रमण करते करते, नहिं आराधा जिनधर्म कभी।
जिन धर्म बिना बहु दुःख अनंतों बार प्राप्त कर रहा दुखी।।३।।

संसार में रहते मरण अनंतानंत बार कीया तूने।
केवलि प्रभु बिन उन मरणों की संख्या नहिं कह सकता जग में।।४।।

छ्यासठ हजार अरु तीन शतक छत्तीस क्षुद्रभव माने हैं।
तूने अंतर्मुहूर्त में ही ये सब भव धरे निगोदों में।।५।।

दो त्रय चउ इंद्रिय के क्रम से अस्सी व साठ चालिस भव हैं।
पंचेन्द्रिय के चौबीस कुभव, अन्तर्मुहूर्त में होते हैं।।६।।

बहु जीव परस्पर में क्रोधित होकर दारुण दुख पाते हैं।
जिनधर्मबुद्धि से रहित जीव कैसे उनसे छुट सकते हैं।।७।।

मां पिता कुटुम्बी स्वजन आदि कोई भी साथ न आते हैं।
तू सदा अकेला भ्रमें न कोई दूजा तेरा इस जग में।।८।।

आयू क्षय होने में समर्थ नहिं कोई आयू देने में।
देवेंद्र नरेंद्र मंत्र मणि औषध नहीं बचा सकते जग में।।९।।

अब जिनवर धर्म मिला तुमको, मन वच तन को तुम शुद्ध करो।
प्रतिसमय सावधानीपूर्वक सब जीवों पर तुम क्षमा करो।।१०।।

सम्यग्दर्शन के शत्रू त्रय सौ-त्रेसठ मिथ्यादर्शन जो।
अज्ञान से इन पर श्रद्धा की वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।११।।

मधु मांस मद्य अरु जुआ आदि सातों व्यसनों का सेवन जो।
नहिं इनका त्याग किया मैंने वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।१२।।

अणुव्रत महाव्रत यम नियम शील मुनिवर गुरुवर ने दीये जो।
उन-उनमें विराधना की जो वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।१३।।

नित्य अनित्य चउ धातू भी सात-सात लक्ष तरु दश लक्षा।
विकलेंद्रिय छह लख सुर नारक तिर्यक् चउ चउ नर चौदह लक्षा।।१४।।

इन सब चौरासी लाख योनियों-में सब जीव भ्रमें दुख सों।
उन-उन की विराधना की जो, वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।१५।।

पृथ्वी जल अग्नी वायु वनस्पति, अरु विकलत्रय प्राणी जो।
उन-उनकी विराधना की जो वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।१६।।

सम्यक्त्व व्रतों में जिनवर ने सत्तर अतिचार बताये जो।
सामायिक क्षमादि में हानी की सब दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।१७।।

फल फूल छाल अरु लता अनछने जल से स्नान आदि भी जो।
उन-उनकी विराधना की जो वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।१८।।

नहिं शील क्षमा नहिं विनय व तप, संयम उपवास न कीये हों।
नहिं किया भावना भी इनकी, वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।१९।।

फल मूल बीज अरु कंद सचित, अज्ञान से इनको खाया हो।
रात्री भोजन भी किया कराया, दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।२०।।

जिनचरणों की पूजा नहिं पात्रदान नहिं ईर्या शुद्धि जो।
नहिं किया भावना नहिं भायी, वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।२१।।

आरंभ परिग्रह बहुत प्रमाद दोष से पाप उपार्जे जो।
जीवों की विराधना करके वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।२२।।

इक सौ सत्तर क्षेत्रों के भूत भविष्यत वर्तमान जिन जो।
उन-उनकी विराधना की हो वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।२३।।

अर्हंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय-साधु पंचपरमेष्ठी जो।
उन-उनकी विराधना की जो वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।२४।।

जिन-वचन धर्म जिनगृह जिनवर प्रतिमा कृत्रिम-अकृत्रिम जो।
उन-उनकी विरधना की हो वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।२५।।

दर्शन सुज्ञान चारित में क्रम से, आठ-आठ पण दोष भी जो।
उन-उनसे विराधना की जो, वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।२६।।

मति श्रुत अवधी मनपर्यय, केवलज्ञान पांच माने हैं जो।
उन-उनकी विराधना की जो, वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।२७।।

आचारादी अंगों पूर्वों व प्रकीर्णक में जिन वर्णित जो।
उन-उनकी विराधना की जो वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।२८।।

मुनि पांच महाव्रत सहित अठारह सहस शील से शोभित जो।
उन-उनकी विराधना की जो वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।२९।।

इस जग में पिता सदृश ऋद्धी-से सहित महागणधर गुरु जो।
उन-उनकी विराधना की हो वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।३०।।

मुनिराज-आर्यिका, श्रावक और श्राविका संघ चतुर्विध जो।
उन-उनकी विराधना की हो वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।३१।।

सुर असुर मनुज नारक तिर्यक् योनी में रहते प्राणी जो।
उन-उनकी विराधना की जो वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।३२।।
जो क्रोध मान माया व लोभ अरु राग द्वेष दोषादिक हों।
अज्ञान से मैंने किया इन्हें वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।३३।।
परवस्त्र ग्रहण, परमहिला राग से पाप प्रमादयोग से जो।
जो अन्य अकार्य किये मैंने वह दुष्कृत मेरा मिथ्या हो।।३४।।
जो एक स्वभावसिद्ध आत्मा संपूर्ण विकल्प विवर्जित है।
नहिं अन्य शरण मेरा कोई वह एक शरण परमात्मा है।।३५।।
जो अरस अरूप अगंध व अव्याबाध अनंत ज्ञानमय है।
नहिं अन्य शरण कोई मेरा वह एक शरण परमात्मा है।।३६।।
सब ज्ञेयप्रमाण ज्ञान एक समय से स्वस्वभाव में है।
नहिं अन्य शरण-मेरा कोई, वह एक शरण परमात्मा है।।३७।।
जो एक-अनेक विकल्प प्रसाधन निजस्वभाव में विशुद्ध है।
नहिं अन्य शरण कोई मेरा वह एक शरण परमात्मा है।।३८।।
ज्ञान अपेक्षा लोकमात्र भी नित्य व स्वतनुमात्र जो है।
नहिं अन्य शरण कोई मेरा वह एक शरण परमात्मा है।।३९।।

इक समय में केवलदर्शन केवलज्ञान द्वि उपयोगमय है।
नहिं अन्य शरण कोई मेरा, वह एक शरण परमात्मा है।।४०।।
निजरूप सहजसिद्ध है विभावगुण कर्म रहित शुद्धात्मा हैं।
नहिं अन्य शरण कोई मेरा वह एक शरण परमात्मा है।।४१।।
नो कर्म कर्म से रहित शून्य है ज्ञानपूर्ण से अशून्य है।
नहिं अन्य शरण कोई मेरा वह एक शरण परमात्मा है।।४२।।
ज्ञान से नहिं भिन्न विकल्प से भिन्न स्वभाव से सुखमय है।
नहिं अन्य शरण कोई मेरा वह एक शरण परमात्मा है।।४३।।
अच्छिन्न व अवच्छिन्न है प्रमेयरूप अगुरूलघुमय है।
नहिं अन्य शरण कोई मेरा वह एक शरण परमात्मा है।।४४।।
शुभ-अशुभ भाव से रहित शुद्ध निज भावों से ही तन्मय है।
नहिं अन्य शरण कोई मेरा वह एक शरण परमात्मा है।।४५।।
नहिं स्त्री नहीं नपुंसक नहिं ये, पुरुष न पुण्य-पापमय है।
नहिं अन्य शरण कोई मेरा वह एक शरण परमात्मा है।।४६।।
नहिं कोई तेरा स्वजन न तू भी बंधु व स्वजन किसी का है।
यह आत्मा एकाकी ज्ञायक है शुद्ध आत्मा चिन्मय है।।४७।।

जिनदेव सदा हों देव मेरे, जिनशासन में मति रहे सदा।
भव-भव में हो सन्यास मरण, निजसंपति मुझको मिले सदा।।४८।।
जिन एव देव जिन एव देव जिन एव देव जिन हैं जिन नित।
है दयाधर्म है दयाधर्म है दयाधर्म है दया सतत।।४९।।
हैं महासाधु हैं महासाधु हैं महासाधु हैं दिगम्बर जो।
ये सभी तत्त्व नित मिले मुझे, जब तक नहिं मुक्ति मिले मुझको।।५०।।
इस विध दुःख के संग में मेरा यह काल अनंत व्यतीत हुआ।
जिनवर भाषित सन्यास में मैंने यत्न से आरोहण न किया।।५१।।
जिनभाषित आराधना मुझे अब प्राप्त हुई पुण्योदय से।
अब क्या-क्या मुझे मिलेगी नहिं सिद्धी समूह संपति इससे।।५२।।
हे धर्म अहो हे धर्म अहो मुझको निर्मल उपलब्धि मिली।
अब इससे मुझे सर्वस्व मिला, अनुपम सुख कलियां आज खिलीं।।५३।।
इस विध आलोचन वंदन प्रतिक्रमण को आराधन करते।
उनको फल मिलता मोक्ष सौख्य श्री 'अजित ब्रह्म' ऐसा कहते ।।५४।।

-दोहा-

गणिनी आर्या ज्ञानमती, किया पद्य अनुवाद।
यह कल्याणालोचना, पढ़ो मिले निजस्वाद।।५५।।

त्रैलोक्य वंदना

-नरेन्द्र छंद (परमपरंज्योति)-

जय जय तीर्थंकर त्रिभुवन के चूड़ामणि जिनस्वामी।
जय जय जिनवर केवलज्ञानी त्रिभुवन अंतर्यामी।।
जय जय चिंतामणि जिनप्रतिमा मनचिंतित फल देतीं।
जय जय जिनमंदिर शाश्वत उन भक्ती शिव फल देती।।१।।
जय जय भवनवासि के जिनगृह अधोलोक में शोभें।
जय जय सात करोड़ बहत्तर लाख भविक मन लोभें।।
जय जय असुर कुमार देव के चौंसठ लाख जिनालय।
जय जय नागकुमारों के चौरासी लाख जिनालय।।२।।
जय जय जय सुपर्णदेव के जिनगृह लाख बहत्तर।
जय जय द्वीप कुमार सुरों के जिनगृह लाख छियत्तर।।
जय जय उदधिकुमार इंद्र के लाख छियत्तर जिनगृह।
जय जय जय स्तनित देव के लाख छियत्तर जिनगृह।।३।।
जय जय विद्युत्कुमारेन्द्र के जिनगृह लाख छियत्तर।
जय जय दिक्कुमार इंद्रों के जिनगृह लाख छियत्तर।।
जय जय अग्निकुमार देव के छियत्तर लाख जिनालय।
जय जय वायु कुमार इंद्र के छ्यानवे लाख जिनालय।।४।।

जय जय मध्यलोक के जिनगृह चार शतक अट्ठावन।
जय जय अकृत्रिम मणिमय जिनमंदिर जन मन भावन।।
जय जय पाँचमेरु के अस्सी जिनमंदिर सुखकारी।
जय जंबूशाल्मलि तरु आदिक दश जिनगृह दुःख हारी।।५।।

जय जय कुलपर्वत के जिनगृह तीस अकृत्रिम शोभें।
जय जय गजदंतों के जिनगृह बीस भव्य मन लोभें।।
जय जय जय वक्षार गिरी के अस्सी जिनगृह सुंदर।
जय जय जय विजयार्ध अचल के जिनगृह इक सौ सत्तर।।६।।

जय जय इष्वाकार अचल के चार जिनालय शाश्वत।
जयजय मनुजोत्तर पर्वत के चार जिनालय भास्वत।।
जय जय नंदीश्वर के बावन जिनमंदिर अभिरामा।
जय जय कुंडलगिरि रुचक गिरी के चार-चार जिनधामा।।७।।

जय जय व्यंतर के जिनमंदिर संख्यातीत महाना।
भवन भवनपुर आवासों में जिनगृह सौख्य निधाना।।
भूतजाति व्यंतर के नीचे चौदह सहस जिनालय।
राक्षस व्यंतर के तल में हैं सोलह सहस जिनालय।।८।।

शेष व्यंतरों के न भवन हैं, भवनपुरावासा[१] हैं।
सब व्यंतर के मध्यलोक में त्रयविध आवासा हैं।।

१. तिलोयपण्णत्ति, पृ. ६४४।

अथवा किन्नर आदि सात विध व्यंतर अधोलोक में।
असंख्यात जिनभवन इन्होंके रत्नप्रभा खरभू में।।९।।

पंकभाग में राक्षसेंद्र के लाख असंख्य नगर हैं[१]।
सबमें जिनमंदिर अकृत्रिम वंदे नित सुरगण हैं।।
इन व्यंतर के मध्यलोक में द्वीप अचलसागर में।
देश नगर घर गली जलाशय वन उपवन मंदिर में।।१०।।

जल थल नभ में ये सब व्यंतर करें निवास निरंतर।
जय जय जय व्यंतर के जिनगृह असंख्यात अतिसुंदर।।
जय जय सूरज चंद्र नखत ग्रह तारा के जिनमंदिर।
जय जय नभ में विमान चमकें उनके मध्य सुमंदिर।।११।।

मध्यलोक के अंतिम तक ये ज्योतिर्वासि विमाना।
जय जय इनके असंख्यात जिनधाम सर्वसुख दाना।।
जय जय ऊर्ध्व लोक के जिनगृह अकृत्रिम अभिरामा।
जय चौरासी लाख सत्यानवे हजार तेइस धामा।।१२।।

जय सौधर्म स्वर्ग के बत्तीस लाख जिनालय सुंदर।
जय ईशान स्वर्ग के लाख अठाइस जिनगृह मनहर।।
जय जय सानत्कुमार दिव में बारह लक्ष जिनालय।
जय जय जय माहेन्द्र स्वर्ग के आठ लक्ष जिनआलय।।१३।।

१. तत्त्वार्थराजवार्तिक, अ. ४, सूत्र ११।

जय जय ब्रह्म कल्प में चार लाख मणिमय जिनआलय।
जय जय लांतव युगल स्वर्ग में लाख पचास जिनालय।।
जय जय महाशुक्रयुग दिव में चालिस सहस जिनालय।
जय जय सहस्रार युग दिव में छह हजार जिनआलय।।१४।।

जय जय आनत प्राणत आरण अच्युत दिव के जिनगृह।
जय जय जय ये सात शतक हैं मणिमय शाश्वत जिनगृह।।
जय जय तीन अधोग्रैवेयक इक सौ ग्यारह जिनगृह।
जय मध्यम त्रय ग्रैवेयक में इकसौ सात सुजिनगृह।।१५।।

जय उपरिम त्रय ग्रैवेयक में इक्यानवे जिनालय।
जय जय जय जय नव अनुदिश के जिनमंदिर सुख आलय।।
जय जय विजय आदि सर्वारथ सिद्धी के जिनआलय।
जय जय ये सर्वार्थसिद्धिकर पंच अनुत्तर आलय।।१६।।

जय जय त्रिभुवन के जिनमंदिर आठ कोटि गुणराशी।
छप्पन लाख हजार सत्यानवे चार शतक इक्यासी।।
जय जय जय जिनगृह में प्रतिमा नव सौ पच्चिस कोटी।
त्रेपन लाख, हजार सताइस नवसौ अड़तालिस ही।।१७।।

जय जय अकृत्रिम जिनमंदिर अकृत्रिम जिन प्रतिमा।
मणिमय रत्नमयी पद्मासन नमूँ नमूँ जिनमहिमा।।

जय जय जय कृत्रिम जिनमंदिर जय कृत्रिम जिनप्रतिमा।
इक सौ सत्तर कर्मभूमि में त्रयकालिक जिन महिमा।।१८।।

जय पैंतालिस लाख सुयोजन सिद्धशिला सुखकारी।
सिद्ध अनंतानंत विराजें, नमूँ नमूँ भवहारी।।
नमूँ नमूँ मैं नित्य नमूँ मैं, हाथ जोड़ शिर नाऊँ।
नमूँ अनंतों बार नमूँ मैं, बार बार शिर नाऊँ।।१९।।

हे प्रभु! मुझ पर कृपा करो अब भवसमुद्र से तारो।
हे प्रभु! स्वात्मसंपदा देकर, स्वात्मसौख्य विस्तारो।।
हे प्रभु! परमानंद सुखामृत देकर तृप्ती कीजे।
"ज्ञानमती" ज्योति प्रगटित हो, सुख अज्ञान हरीजे।।२०।।

-दोहा-

त्रैकालिक कृत्रिम सभी, जिनप्रतिमा जिनधाम।
कहे अनंतानंत ही, तिन्हें अनंत प्रणाम।।२१।।

स्वास्थ्य मंत्र

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं
आरोग्यलाभं कुरु कुरु स्वाहा।

श्री तीर्थंकर स्तवन

(माता के सोलह स्वप्न सहित)

—सोरठा—

जय जय श्री जिनराज, पृथ्वीतल पर आवते।
बरसें रत्न अपार, सुरपति मिल उत्सव करें।।१।।

—शंभु छंद—

प्रभु तुम जब गर्भ बसे आके, उसके छह महीने पहले ही।
सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से, बहु रतनवृष्टि धनपति ने की।।
मरकतमणि इन्द्र नीलमणि औ, वरपद्मरागमणियाँ सोहें।
माता के आंगन में बरसें, मोटी धारा जनमन मोहें।।१।।
प्रतिदिन साढ़े बारह करोड़, रत्नों की वर्षा होती है।
पन्द्रह महिने तक यह वर्षा, सब जन का दारिद खोती है।।
जिनमाता पिछली रात्री में, सोलह स्वप्नों को देखे हैं।
प्रातः पतिदेव निकट जाकर, उन सबका शुभ फल पूछे हैं।।२॥
पतिदेव कहें हे देवि! सुनो, तुम तीर्थंकर जननी होंगी।
त्रिभुवनपति शतइन्द्रों वंदित, सुत को जनि भवहरणी होंगी।।

ऐरावत हाथी दिखने से, तुमको उत्तम सुत होवेगा।
उत्तुंग बैल के दिखने से, त्रिभुवन में ज्येष्ठ सु होवेगा।।३।।

औ सिंह देखने से अनन्त-बलयुक्त मान्य कहलायेगा।
मालाद्वय दिखने से सुधर्ममय उत्तम तीर्थ चलायेगा।।
लक्ष्मी के दिखने से सुमेरु-गिरि पर उसका अभिषव होगा।
पूरण शशि से जन आनन्दे, भास्कर से प्रभामयी होगा।।४।।

द्वयकलशों से निधि का स्वामी, मछली युग दिखीं-सुखी होगा।
सरवर से नाना लक्षण युत, सागर से वह केवलि होगा।।
सिंहासन को देखा तुमने, उससे वह जगद्गुरू होगा।
सुर के विमान के दिखने से, अवतीर्ण स्वर्ग से वह होगा।।५।।

नागेन्द्र भवन से अवधिज्ञान, रत्नों से गुण आकर होगा।
निर्धूम अग्नि से कर्मेंधन, को भस्म करे ऐसा होगा।।
फल सुन रोमांच हुई माता, हर्षित मन निज घर आती है।
श्री ह्री धृति आदिक देवी मिल, सेवा करके सुख पाती हैं।।६।।

पति की आज्ञा से शची स्वयं, निज गुप्त वेष में आती है।
माता की अनुपम सेवा कर, बहु अतिशय पुण्य कमाती है।।

जब गूढ़ प्रश्न करती देवी, माता प्रत्युत्तर देती हैं।
त्रयज्ञानी सुत का ही प्रभाव, जो अनुपम उत्तर देती है।।७।।

इस विध से माता का माहात्म्य, प्रभु तुम प्रसाद से होता है।
तुम नाम मंत्र भी अद्भुत है, भविजन का अघमल धोता है।।
मैं इसीलिए तुम शरण लिया, भगवन्! अब मेरी आश भरो।
निज 'ज्ञानमती' संपति देकर, स्वामिन् अब मुझे कृतार्थ करो।।८।।

श्री शांतिसागर! मुनीन्द्र! नमोऽस्तु तुभ्यं,
सूरिस्त्वमेव प्रथमः किल संप्रतीह।
पट्टाधिपः प्रथम एव च यः प्रसिद्धः,
तं वीरसागर गुरुं प्रणमामि भक्त्या।।१।।

-गणिनी ज्ञानमती

अथ वज्रपंजरस्तोत्रम्

परमेष्ठिनमस्कारं, सारं नवपदात्मकम्।
आत्मरक्षाकरं वज्र-पंजराख्यं स्मराम्यहम्।।१।।
ॐ णमो अरहंताणं, शिरस्कन्धरसं स्थितम्।
ॐ णमो सिद्धाणं, मुखे मुखपटाम्बरम्।।२।।
ॐ णमो आइरियाणं, अंगरक्षातिशायिनी।
ॐ णमो उवज्झायाणं, आयुधं हस्तोयोर्दृढम्।।३।।
ॐ णमो लोए सव्वसाहूणं, मोचके पदयोः शुभे।
एसो पंच णमोयारो, शिला वज्रमयी तले।।४।।
सव्वपावप्पणासणो, वप्रो वज्रमयो बहिः।
मंगलाणं च सव्वेसिं, खदिरांगारखातिका।।५।।
स्वाहान्तं च पदं ज्ञेयं, पढमं हवइ मंगलम्।
वप्रोपरि वज्रमयं, पिधानं देहरक्षणे।।६।।
महाप्रभावरक्षेयं, क्षुद्रोपद्रवनाशिनी।
परमेष्ठीपदोद्भूता, कथिता पूर्वसूरिभिः।।७।।
यश्चैवं कुरुते रक्षां, परमेष्ठिपदैः सदा।
तस्य न स्याद् भयं व्याधि-राधिश्चापि कदाचन।।८।।